प्रतिवेद्य

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय
दांडिक अपीलीय अधिकारिता

दांडिक अपील संख्या- 1457/2021

मोहम्मद ज़ाहिद ...अपीलार्थी

बनाम

एनसीबी के माध्यम से राज्य ...प्रत्यर्थी

निर्णय

एम.आर. शाह, न्यायमूर्ति

1. दांडिक अपील संख्या 879/2002 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय और आदेश दिनांक 31.03.2017 से व्यथित और असंतुष्ट होकर, मूल अभियुक्त ने वर्तमान अपील दायर की है। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी-मूल अभियुक्त द्वारा दायर उक्त अपील को खारिज कर दिया था और माननीय विचारण न्यायलय द्वारा पारित उस निर्णय और आदेश की पुष्टि की थी, जिसमें अपीलार्थी को नारकोटिक्स ड्रग्स एंड

साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985 (इसके बाद एनडीपीएस अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 29 सहपठित धारा 21 (सी) के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था और उसे एन डी पी एस अधिनियम की धारा 31 (ii) के प्रावधानों के मद्देनज़र उपरोक्त अपराध के लिए 1,50,000 रुपये के जुर्माने के साथ 15 साल के सश्रम कारावास (आरआई) की सजा सुनाई गई थी।

2. संक्षेप में वर्तमान अपील से संबंधित तथ्य इस प्रकार हैं:-

2.1 यह कि अपीलार्थी-मूल अभियुक्त पर 4 किलो हेरोइन की बरामदगी के मामले में एनडीपीएस अधिनियम की धारा 23 और 21 के तहत अपराध के लिए थाना कस्टम्स, अमृतसर, पंजाब में दर्ज प्राथमिकी संख्या 134/1999 के संबंध में मुक़दमा चलाया गया। उसे अमृतसर न्यायलय ने 12 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई थी। दिल्ली से 750 ग्राम हेरोइन की बरामदगी के लिए नई दिल्ली में अपीलार्थी-मूल अभियुक्त के खिलाफ एक अन्य प्राथमिकी संख्या

43/1999 भी दर्ज की गई थी। दूसरे मामले में भी निर्णय और आदेश दिनांक 30.01.2002 द्वारा, उसे एनडीपीएस अधिनियम की धारा 29 सहपठित धारा 21 (सी) के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था। दिल्ली के माननीय विचारण न्यायालय ने 10 वर्ष के सश्रम कारावास की सजा (न्यूनतम सजा) दी, हालांकि, एनडीपीएस अधिनियम की धारा 31(ii) के प्रावधानों के मद्देनज़र जिसमें पिछली सजा के बाद अपराधों के लिए बढ़ी हुई सजा का प्रावधान है, और इस तथ्य पर विचार करते हुए कि पहले अपीलकर्ता को प्राथमिकी संख्या 134/1999 से उत्पन्न एक मामले में एनडीपीएस अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था, इस लिए माननीय विचारण न्यायालय ने न्यूनतम 15 वर्ष सश्रम कारावास की सजा सुनाई। दिल्ली के माननीय विचारण न्यायालय द्वारा प्राथमिकी सं. 43/1999 (बाद के विचारण) से उत्पन्न मुकद्दमे में कोई विशेष आदेश पारित

नहीं किया गया था कि 15 वर्ष के सश्रम कारावास की सजा साथ-साथ या क्रमवार चलेगी।

3. प्राथमिकी संख्या 43/1999 (दूसरे/बाद के मामले) से उत्पन्न एक मामले में दिल्ली के माननीय विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होने के बाद, अपीलार्थी-मूल अभियुक्त ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की। उच्च न्यायालय के समक्ष मुख्य रूप से अपीलार्थी-अभियुक्त की ओर से यह निवेदन किया गया कि चूंकि अपीलार्थी-अभियुक्त को एफआईआर संख्या 134/1999 से उत्पन्न एक मामले में पहले ही 12 साल की सजा हो चुकी है, इसलिए उसे दो बार दंडित नहीं किया जा सकता और एफआईआर संख्या 43/1999 से उत्पन्न मामले में वह पहले ही 6 साल और 2 महीने की सजा काट चुका है, इसलिए एक उदार दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है और दोनों मामलों/मुक़दमों में दी गई सजाएं, अर्थात एफआईआर संख्या 134/1999 (अमृतसर केस) से उत्पन्न और दूसरी

एफआईआर संख्या 43/1999 (नई दिल्ली केस) से उत्पन्न सजाएं साथ-साथ चलने का निर्णय दिया जाए। आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने उपरोक्त को स्वीकार नहीं किया है और अपील को खारिज कर दिया है। अतः अभियुक्त ने वर्तमान अपील दायर की है।

4. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री संगीता कुमार ने अपने संक्षिप्त लिखित निवेदन में कहा है कि अपीलार्थी एक विदेशी नागरिक है, जो लाहौर, पाकिस्तान का निवासी है और पिछले लगभग 22 वर्षों से सलाखों के पीछे है क्योंकि उसे थाना, सीमा शुल्क, पंजाब द्वारा 1999 की प्राथमिकी संख्या 134 के संबंध में 15.06.1999 को गिरफ्तार किया गया था और उस पर 4 किलो हेरोइन के आयात के लिए एनडीपीएस अधिनियम, 1985 की धारा 21 और 23 के तहत अपराध का आरोप लगाया गया था और अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, अमृतसर, के आदेश दिनांकित 08.12.2000 द्वारा दोषी ठहराया गया था।

पूर्वोक्त निवेदनों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी पर 17.09.1999 से 14.02.2002 तक मुक़दमा चल रहा था और दूसरे अपराध के लिए उक्त अवधि पर विचार नहीं किया गया है। यह निवेदन किया गया कि यदि सजाएं क्रम से चलनी हैं और यदि उपरोक्त अवधि को भी ध्यान में रखा जाता है, तो अपीलार्थी की सलाखों के पीछे रहने को अवधि को कम करना होगा।

4.1 अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी की आयु 30 वर्ष थी जब उसे दोषी ठहराया गया था और अब वह 52 वर्ष का है। जेल में उसका आचरण अच्छा है और जेल अधीक्षक द्वारा उसके खिलाफ कोई प्रतिकूल टिप्पणी नहीं की गई है। इसलिए, अपीलार्थी अब जिन दो सजाओं का सामना कर रहा है, उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत एक साथ चलाने का निर्णय दिया जाए।

4.2 यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी-अभियुक्त ने एफआईआर संख्या 134/1999 में पहले ही 12 वर्ष का सश्रम कारावास पूरा कर लिया है, और यदि अमृतसर में दर्ज एफआईआर संख्या 134/1999 और नई दिल्ली में दर्ज एफआईआर संख्या 43/1999 से उत्पन्न दोनों मामलों की सजाओं को एक साथ चलाने का निर्णय नहीं दिया जाता है और अपीलार्थी-अभियुक्त को एक साथ सजा भुगतनी पड़ती है, तो उस स्थिति में अपीलार्थी को पूरे 27 साल का कारावास पूरा करना होगा। इसलिए यह निवेदन है कि दोनों मामलों में दी गई सजा को एक साथ चलाने का निर्णय दिया जाए।

4.3 यह निवेदन किया गया है कि इस प्रकार एफआईआर संख्या 43/1999 से उत्पन्न मामले में, दिल्ली न्यायलय ने 15 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाते हुए कोई आदेश पारित नहीं किया कि दोनों मामलों में सजा एक साथ चलेगी या नहीं। इसलिए यह

निवेदन है कि अपीलार्थी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 का लाभ दिया जाना चाहिए।

5. राज्य-प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री आकांक्षा कौल द्वारा वर्तमान अपील का पुरजोर विरोध किया गया है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 पर अधिक भरोसा जताया गया है। यह निवेदन किया गया कि वर्तमान मामले में आरोपी को अलग-अलग अपराधों के लिए दो अलग-अलग मुक़दमों का सामना करना पड़ा और एक ही मामले से उत्पन्न नहीं हुआ और इसलिए दोनों मामलों में दी गई सजा अलग-अलग ही चलेगी।

5.1 यह कहा गया कि सामान्य नियम यह है कि अलग-अलग अपराधों में दो अलग-अलग मुक़दमों में दिए गए दंड अलग-अलग चलेंगे जहां दो अलग-अलग मामले हों; अलग-अलग निर्णयों द्वारा अलग-अलग अपराध संख्या और मामलों का फैसला किया गया है। यह निवेदन किया गया कि अपवाद वे मामले हैं जो दंड प्रक्रिया संहिता

की धारा 427(1) और धारा 427(2) के प्रावधानों के तहत आते हैं या जब न्यायलय निर्देश दे कि सजा अलग-अलग चलेगी।

5.2 यह निवेदन किया गया कि समवर्ती सजा का आदेश देने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत न्यायलय को प्रदत शक्ति भी विवेकाधीन है, लेकिन विवेक का प्रयोग घटित अपराध के स्वरूप और उन तथ्यों की स्थिति को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए जिनमें प्रश्न उठता है।

5.3 यह निवेदन किया गया कि वर्तमान मामले में, सजा देने वाली अदालत ने सजा को एक साथ चलाने का निर्देश नहीं दिया। यह निवेदन किया गया कि वर्तमान मामले में अपीलकर्ता - आरोपी को दो अलग-अलग मामलों में (एक ही मामले से उत्पन्न नहीं) दो अलग-अलग अपराधों के लिए दो अलग-अलग मुक़दमों का सामना करना पड़ा और इसलिए अपीलकर्ता की ओर से इस निवेदन का कोई अर्थ नहीं कि दोनों मामलों में दी गई सज़ाएँ साथ-साथ चलेंगी और इसे दिया भी नहीं जा सकता।

5.4 अपने उपरोक्त निवेदन के समर्थन में, उन्होंने इस न्यायलय के निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:- **मोहम्मद अख्तर हुसैन उर्फ इब्राहिम अहमद भट्टी बनाम सीमा शुल्क (रोकथाम) के सहायक कलेक्टर, अहमदाबाद एवं एक अन्य** (1988) 4 एससीसी 183; **रंजीत सिंह बनाम केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ और एक अन्य** (1991) 4 एससीसी 304; **वी.के. बंसल बनाम हरियाणा राज्य और एक अन्य** (2013) 7 एससीसी 211; **नीरा यादव बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो** (2017) 8 एससीसी 757; **विक्की @ विकास बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)** (2020) 11 एससीसी 540; **गुरदेव सिंह बनाम पंजाब राज्य** (2021) 6 एससीसी 558; **शरद हीरू कोलम्बे बनाम. महाराष्ट्र राज्य और अन्य।** (2018) 18 एससीसी 718 और **राजपाल बनाम ओम प्रकाश व एक अन्य** (2019) 17 एससीसी 809।

5.5 यह निवेदन भी किया गया कि वर्तमान मामले में अपीलकर्ता-आरोपी आदतन अपराधी है। एफआईआर संख्या 134/1999 के

संबंध में, उन्हें 4 किलो हेरोइन रखने/बरामदगी के लिए एनडीपीएस अधिनियम की धारा 23 और 21 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था और वहीं एफआईआर नंबर 43/1999 से जुड़े एक अन्य मामले में उसे 750 ग्राम हेरोइन बरामदगी के लिए दोषी करार दिया गया है। यह निवेदन किया गया कि इसलिए अपीलकर्ता-आरोपी प्रार्थना अनुसार किसी भी प्रकार की नरमी का हकदार नहीं है।

6. उपरोक्त निवेदन करके इस न्यायलय के फैसलों पर भरोसा करते हुए, वर्तमान अपील को खारिज करने की प्रार्थना की जाती है।

7. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को विस्तार से सुना है।

8. इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए जो संक्षिप्त प्रश्न उठाया गया है, वह यह है कि क्या दो अलग-अलग न्यायलय द्वारा दो अलग-अलग मुक़दमों में एक ही अभियुक्त/व्यक्ति के खिलाफ

सुनाई गई सज़ाएँ एक साथ चलनी चाहियें जैसा कि अपीलकर्ता की ओर से निवेदन किया गया है या लगातार।

8.1 सबसे पहले, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता-आरोपी को दो अलग-अलग न्यायलय द्वारा दो अलग-अलग मुक़दमों में अलग-अलग मामलों के संबंध में अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया है। एक मामले में उसे अमृतसर कोर्ट द्वारा एनडीपीएस एक्ट की धारा 23 और धारा 21 के तहत अपराध के लिए 12 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई है और प्राथमिकी संख्या 43/1999 से जुड़े एक अन्य मामले में दिल्ली न्यायलय ने उसे एनडीपीएस एक्ट की धारा 29 सहपठित धारा 21 (सी) के तहत अपराध के लिए 15 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई है। एक मामले में उसे 4 किलो हेरोइन और दूसरे मामले में 750 ग्राम हेरोइन रखने का दोषी ठहराया गया है। यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि दोनों मामलों में एक के बाद एक निर्णय दिए गए हैं और

दिल्ली की अदालत द्वारा बाद के फैसले और दोषसिद्धि एवं सजा के आदेश में, माननीय विचारण न्यायलय (दिल्ली न्यायलय) द्वारा कोई विशेष आदेश पारित नहीं किया गया है कि सजाएं साथ-साथ चलेंगी। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपील के प्रश्न पर विचार किया जाना आवश्यक है।

8.2 वर्तमान अपील के मुद्दे पर विचार करते समय, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 को संदर्भित करने की आवश्यकता है, जो निम्नानुसार है:-

427. ऐसे अपराधी को दंडादेश जो अन्य अपराध के लिए पहले से दण्डादिष्ट है-

जब कारावास का दंडादेश पहले से ही भोगने वाले व्यक्ति को पश्चात्वर्ती-दोषसिद्धि पर कारावास या आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है तब जब तक न्यायालय यह निर्देश न दे कि पश्चात्वर्ती दंडादेश ऐसे पूर्व दंडादेश के साथ-साथ भोगा जाएगा, ऐसा कारावास या आजीवन कारावास उस कारावास की समाप्ति पर, जिसके लिए, वह पहले दंडादेश हुआ था, प्रारम्भ होगा :परन्तु, जहां उस व्यक्ति को, जिसे प्रतिभूति देने में व्यतिक्रम करने पर धारा 122 के अधीन आदेश द्वारा कारावास का दंडादेश दिया गया है ऐसा दंडादेश भोगने के दौरान ऐसे आदेश के दिए जाने के पूर्व किए गए अपराध के लिए कारावास का

दंडादेश दिया जाता है, वहां पश्चात्कथित दंडादेश तुरंत प्रारम्भ हो जाएगा।

(2) जब किसी व्यक्ति को, जो आजीवन कारावास का दंडादेश पहले से ही भोग रहा है, पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि पर किसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है तो पश्चात्वर्ती दंडादेश पूर्व दंडादेश के साथ-साथ भोगा जाएगा।

अतः द.प्र.स. की धारा 427 के निष्पक्ष अध्यन पर, जब एक व्यक्ति जो पहले से ही सजा काट रहा है उसे बाद में कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है तो ऐसा कारावास या आजीवन कारावास की ऐसी सजा पहले सुनाई गई सजा के पश्चात शुरु होगी | अर्थात दोनों दंडादेशो की सजाए क्रमानुसार चलेगी | हालांकि इसका एक अपवाद है की जब तक न्यायलय यह निर्देश न दे कि पश्चात्वर्ती सजा पहले सुनाई गयी सज़ा के साथ-साथ चलेगी| इसका एक अन्य अपवाद है| द.प्र.स. की धारा 427 की उप - धारा (2) के अनुसार जब कोई व्यक्ति जो आजीवन कारावास का दंडादेश पहले से ही भोग रहा है, पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि पर किसी अवधि के कारावास या आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है तो पश्चात्वर्ती दंडादेश पूर्व

दंडादेश के साथ-साथ भोगा जाएगा। इसलिए उपरोक्त दो मामलो में केवल पश्चात्वर्ती दंडादेश पहले दी गई सजा क साथ-साथ चलेगा| अन्यथा बाद में दी गयी सजा क्रमनुसार चलेगी और बाद में सुनाई गयी सजा पूर्व मे काटी गयी सजा के बाद आरंभ होगी|

8.3 क्या बाद की सजा एक साथ चलनी चाहिए या क्रमानुसार, इस संबंध में इस न्यायलय के कुछ निर्णयों को संदर्भित करने की आवश्यकता है।

8.3.1 **मोहम्मद अख्तर हुसैन (उपरोक्त)** के मामले में, यह टिपण्णी करते हुए कहा गया कि यदि अपराधों से संबंधित मामला समान नहीं है या दो अपराधों के तथ्य काफी भिन्न हैं तो ऐसे में बाद की सजा क्रमानुसार चलनी चाहिए।

मोहम्मद अख्तर हुसैन के मामले में, इस न्यायालय ने कहा कि कानून द्वारा सजा देने वाली अदालतों के लिए छोड़े गए विवेक का व्यापक विस्तार केवल अपराध की गंभीरता तक सीमित नहीं

होना चाहिए। कोई भी विवेचन निश्चित रूप से उचित सज़ा का निर्धारण नहीं कर सकता है। उचित सजा पर पहुंचने में, अदालत को कई कारकों पर विचार करना चाहिए और कभी-कभी अस्वीकार करना चाहिए। अदालत को कई विविध डेटा को 'पहचानना, नियंत्रित करना और अलग करना' जानना चाहिए। तर्कसंगत सजा सुनिश्चित करने के लिए यह एक संतुलनकारी कार्य और जटिल प्रक्रिया है। विशेष रूप से क्रमानुसार सजाओं में, न्यायालय उस कारावास से आँख नहीं मूँद सकता जो अभियुक्त पहले से ही भुगत रहा है।

मोहम्मद अख्तर हुसैन एक ऐसा मामला है जो गोल्ड (कंट्रोल) एक्ट, 1968 के तहत एक पाकिस्तानी नागरिक से जुड़ा है। 1982 के सीसी नंबर 1674 में मुख्य महानगर दंडाधिकारी, अहमदाबाद की अदालत द्वारा पहले मामले में 7 साल की कैद और 10 लाख रुपये के जुर्माने की सजा थी। अपील करने पर, उच्च न्यायालय ने सजा की पुष्टि की

लेकिन जुर्माना घटाकर 5 लाख रुपये कर दिया। इसमें अपीलार्थी द्वारा दायर विशेष अनुमति याचिका को इस न्यायालय ने खारिज कर दिया और दोषसिद्धि और सजा अंतिम हो गई। जब अपीलार्थी उक्त मामले में न्यायिक हिरासत में था, तब उसकी तस्करी गतिविधियों के संबंध में आगे की जांच की गई थी। इससे कई लोगों की मिलीभगत से सोने और चांदी की तस्करी के व्यापक रैकेट का पता चला। उसमें अपीलकर्ता पर 18 अन्य लोगों के साथ सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 135 के तहत फिर से मुकदमा चलाया गया था। उसमें अपीलकर्ता को दोषी ठहराया गया और 4 साल के सश्रम कारावास और 2 लाख रुपये के जुर्माने की सजा और जुर्माना अदा न करने पर व्यतिक्रम के बदले में सजा सुनाई गई।

इसके बाद, राज्य के साथ-साथ उसमें अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। उच्च न्यायालय ने राज्य

की अपील को स्वीकार कर लिया और सजा को 4 साल से बढ़ाकर 7 साल कर दिया और इसे क्रमानुसार कर दिया। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की अपील को खारिज कर दिया। नतीजा यह हुआ कि उन्हें सभी 14 साल के कारावास की सजा काटनी पड़ी, जिसे उन्होंने इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी अंतत: इस न्यायलय ने विचारण न्यायलय द्वारा दी गई सजा को बहाल कर दिया और अपील की अनुमति देकर उच्च न्यायालय द्वारा बढ़ाई गई सजा को रद्द कर दिया।

8.3.2 पैराग्राफ 8 में **रंजीत सिंह (उपरोक्त)** के मामले में, निम्नानुसार टिपण्णी की गई:-

"8. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 की उपधारा (1) में उस स्थिति का प्रावधान है जब पहले से ही कारावास की सजा भुगत रहे व्यक्ति को बाद में कारावास या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है। दूसरे शब्दों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 की उपधारा (1) एक ऐसे अपराधी से संबंधित है, जिसे एक निश्चित अवधि के लिए सजा भुगतते हुए बाद में एक निश्चित अवधि के लिए या आजीवन कारावास का दोषी ठहराया जाता है। ऐसी स्थिति में, पहली सजा, एक निश्चित अवधि के लिए होने के कारण, एक निश्चित तारीख को

समाप्त हो जाती है, जो बाद की दोषसिद्धि के समय ज्ञात होती है। उपधारा (1) में कहा गया है कि ऐसी स्थिति में, पहली सजा जो अपराधी काट रहा है, की समाप्ति की तारीख ज्ञात होने पर, आमतौर पर बाद की सजा कारावास की पहली अवधि की समाप्ति पर शुरू होगी जब तक कि अदालत बाद की सजा को पिछली सजा के साथ-साथ चलने का निर्देश न दे। जाहिर है, उपधारा (1) के तहत आने वाले मामलों में जहां सजा एक निश्चित अवधि के लिए होती है, बाद की सजा क्रमानुसार हो सकती है जब तक कि एक साथ चलने का निर्देश न दिया जाए। दूसरी ओर, उपधारा (2) में एक ऐसे अपराधी के लिए प्रावधान है जो "पहले से ही आजीवन कारावास की सजा भुगत रहा है" जिसे बाद की दोषसिद्धि पर एक (निश्चित) अवधि या आजीवन कारावास की सजा सुनाई जाती है। *मिठू बनाम पंजाब राज्य,* (1983) 2 एससीसी 277 के बाद *गोपाल विनायक गोडसे* [रंजीत सिंह बनाम चंडीगढ़ केंद्र शासित प्रदेश, (1984) 1 एससीसी 31 में इस न्यायालय के फैसले के बाद से यह अच्छी तरह से स्थापित है और *मारू राम* [(1981) 1 एससीसी 107 में दोहराया गया है कि आजीवन कारावास अपराधी के शेष जीवन के लिए एक सजा है जब तक कि शेष सजा को उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा बदल या माफ़ न कर दिया जाए। बाद में दोषसिद्धि पर न्यायालय द्वारा सजा सुनाए जाने के चरण में ऐसा होने पर, आजीवन कारावास की पूर्व सजा को इस प्रकार समझा जाना चाहिए और, इसलिए, बाद मे एक निश्चित अवधि के लिए कारावास या क्रमानुसार आजीवन कारावास की सजा का कोई सवाल ही नहीं हो सकता जो धारा 427 की उपधारा (1) में निर्धारित सामान्य नियम है। जैसा कि श्री गर्ग ने सही तर्क दिया, और श्री ललित द्वारा विवादित नहीं किया गया, आजीवन कारावास की पूर्व सजा का अर्थ शेष जीवन जेल में काटने की सजा के रूप में समझा जाना जब तक उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा परिवर्तित या माफ़ नहीं किया जाता है और केवल एक जीवन काल वाला व्यक्ति, एक अवधि के लिए कारावास या आजीवन कारावास के बाद की सजा पर सजा केवल पहले के आजीवन कारावास की सजा पर लागू की जा सकती है और निश्चित रूप से इसमें नहीं जोड़ी जा सकती है अपराधी के जीवन काल का विस्तार करना या उस मामले के लिए कोई भी मानव शक्ति से परे है। यह स्पष्ट स्थिति है जो धारा 427 की उप धारा (2) में बताई गई है क्योंकि उसकी उपधारा

(1) में उल्लिखित सामान्य नियम यह है कि अदालत के निर्देश के बिना बाद की सजा एक साथ नहीं बल्कि क्रमानुसार चलेगी। एकमात्र स्थिति जिसमें पिछली सजा के साथ-साथ बाद की सजा को चलाने के लिए अदालत के किसी निर्देश की आवश्यकता नहीं है, उपधारा (2) में प्रदान की गई है जिसे उपधारा (1) पर आधारित किसी भी संभावित विवाद से बचने के लिए बनाया गया है, यदि उस संबंध में न्यायालय का कोई स्पष्ट निर्देश नहीं है। उपधारा (2) धारा 427 की उपधारा (1) के सामान्य नियम के अपवाद की स्थिति में है कि बाद की दोषसिद्धि की सजा पहली सजा की समाप्ति पर शुरू होती है जब तक कि अदालत इसे एक साथ चलाने का निर्देश नहीं देती। इसलिए धारा 427 की उपधारा (1) और (2) का अर्थ और उद्देश्य और उपधारा (2) को लागू करने का उद्देश्य स्पष्ट है।"

8.3.3 वी के बंसल (उपरोक्त) के मामले में, पैरा 10 में मोहम्मद अख्तर (उपरोक्त) के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करने के बाद निम्नानुसार टिप्पणी की है:-

"10. इस मामले में संहिता की धारा 427(1) के तहत न्यायालय को उपलब्ध शक्ति के स्वरुप से हमारा अधिक सरोकार है, जो हमारी राय में तीन स्थितियों को छोड़कर पालन किए जाने वाले एक सामान्य नियम को निर्धारित करता है: पहला धारा 427 की उपधारा (1) के प्रावधान के अंतर्गत आता है; दूसरा उसके उपधारा (2) के अंतर्गत आता है; और तीसरा जहां अदालत निर्देश देती है कि सजाएं साथ-साथ चलेंगी। यह धारा 427 (1) से प्रकट होता है कि न्यायालय के पास निर्देश जारी करने की शक्ति और विवेक है, लेकिन न्यायालय को प्रदत्त शक्ति के स्वरुप में विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग न्यायिक तर्ज पर किया जाना चाहिए, न कि बुद्धिरहित, उदासीन या रूढ़िवादी ढंग से। न्यायलय द्वारा इस तरह के विवेक का प्रयोग करने के मामले में किसी भी तरह के कठोर दृष्टिकोण को निर्धारित करना मुश्किल है। धारा 427 (1) के चिंतन के भीतर निर्देश जारी करने या

अस्वीकार करने के मामले में न्यायालय के पास कोई सटीक नियम नहीं है। किसी विशेष मामले में निर्देश जारी किया जाना चाहिए या नहीं, यह किये गए अपराध अथवा अपराधों के स्वरुप तथा उस तथ्य की परीस्थिति पर निर्भर करेगा जिसमें समवर्ती सज़ाएँ चलने का प्रश्न उठता है।"

8.3.4 **नीरा यादव (उपरोक्त)** के मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 की व्याख्या/विचार करते समय यह टिपण्णी की गई और यह माना गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 एक ऐसे अपराधी को दी गई सजा से संबंधित है जिसे पहले से ही किसी अन्य अपराध के लिए सजा सुनाई जा चुकी है और समवर्ती सजा का आदेश देने के लिए धारा 427 के तहत न्यायालय को प्रदत्त शक्ति विवेकाधीन है। यह भी कहा गया कि विधायिका की नीति यह है कि आम तौर पर सजा क्रमानुसार दी जानी चाहिए। यह भी कहा गया कि केवल उपयुक्त मामलों में, मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए, अदालत सजा को पहले की सजा के साथ समवर्ती कर सकती है। यह भी कहा गया कि सहसंगता का निर्देश देने के लिए सजा देने वाली अदालत द्वारा प्रयोग किया गया

विवेक ठोस सिद्धांतों पर करना होगा, न कि सनक पर। किसी विशेष मामले में निर्देश जारी किया जाना चाहिए या नहीं, यह अपराध के स्वरुप या घटित अपराधों पर निर्भर करेगा। उक्त निर्णय में आगे यह कहा और माना गया है कि यह अच्छी तरह से स्थापित है कि जहां अलग-अलग मामले हैं, अलग-अलग अपराध संख्याएं हैं और अलग-अलग निर्णयों द्वारा मामलों का फैसला किया गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत साथ-साथ सजा नहीं दी जा सकती। यह भी कहा गया है कि हालांकि, सामान्य नियम यह है कि अगर सजा दो अलग-अलग मामलों से संबंधित है, तो सजा समवर्ती नहीं हो सकती, (हाँ) अदालत के आदेश से बदला जा सकता है।

8.3.5 **शरद हीरू कोलाम्बे (उपरोक्त)** के मामले में, यह कहा और माना गया कि जब तक अदालत यह निर्देश नहीं देती कि एक ही मुकदमे में एक जैसे दो या दो से अधिक अपराधों की सजा एक साथ चलनी चाहिए, तो सामान्य सिद्धांत यह है कि एक सजा

दूसरे की समाप्ति के बाद शुरू होगी। इसी तरह, ऐसे मामले में जहां पहले से ही सजा भुगत रहे व्यक्ति को बाद के मुकदमे में अपराध के संबंध में सजा सुनाई जाती है, तो सामान्य नियम यह है कि बाद में दी गई सजा क्रमानुसार चलती है जब तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत प्रदत विवेक का प्रयोग करते हुए बाद में कोई भी सज़ा देते समय अदालत द्वारा कोई विशिष्ट आदेश पारित नहीं किया जाता कि तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए बाद की सजा एक साथ चलनी चाहिए, तब तक दोनों मामलों में दी गई सजा क्रमानुसार चलेगी।

8.3.6 **गुलाम मोहम्मद मलिक बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य.** (2018) 14 एससीसी 473 के मामले में, इस न्यायालय ने दो अपीलों पर विचार किया। एक ही अपीलार्थी के संबंध में एक गुजरात के उच्च न्यायालय के निर्णय से और दूसरा बंबई के उच्च न्यायालय के निर्णय से। दोनों मामलों में, अपीलार्थी पर एनडीपीएस अधिनियम, 1985 की धारा 8 (सी), 20 (बी) और 29

के तहत आरोप लगाए गए। जहां तक गुजरात में दायर एनडीपीएस केस नंबर 1/2002 के रूप में दर्ज मामले का संबंध है, तो अपीलार्थी को दोषी करार देते हुए दस वर्ष के सश्रम कारावास एवं एक लाख रुपए का जुर्माना अदा करने का निर्देश दिया गया और जुर्माना अदा न करने की स्थिति में और एक वर्ष के सश्रम कारावास की सज़ा सुनाई गई। उसमें अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देते हुए एक अपील दायर की जिसने उसकी अपील को खारिज कर दिया। दरअसल, सजा बढ़ाने की राज्य की अपील खारिज कर दी गई।

दूसरे मामले में, अपीलार्थी पर एनडीपीएस, सत्र न्यायालय, ग्रेटर बॉम्बे के विशेष न्यायाधीश द्वारा 2002 के विशेष मामला संख्या 60 में मुकदमा चलाया गया, जिसके परिणामस्वरूप एनडीपीएस\ अधिनियम की धारा 8(सी), 20(b)(ii) सहपठित धारा 31A के तहत अपीलार्थी दोषसिद्ध हुआ और उसे मृत्यु दंडादेश सुनाया गया। मृत्यु दंडादेश को उच्च न्यायालय के समक्ष पुष्टि के

लिए भेजा गया था। उसमें अपीलार्थी ने उक्त दोषसिद्धि और सजा के विरुद्ध बंबई उच्च न्यायालय में एक अपील भी दायर की थी। उच्च न्यायालय ने मृत्यु दंडादेश की पुष्टि न करके राज्य द्वारा दायर पुष्टि मामला संख्या 2/2008 को खारिज कर दिया और अपीलार्थी की अपील को खारिज कर करते हुए मृत्यु दंडादेश को तीस साल के सश्रम कारावास और 3 लाख रुपये के जुर्माने में बदल दिया गया। मृत्यु दंडादेश के परिवर्तन से संबंधित मामले पर इस न्यायालय के समक्ष विचार किया गया था और उक्त मामले के तथ्यों से संबंधित एनडीपीएस अधिनियम की धारा 31 पर विचार करने पर यह माना गया कि इसमें अपीलार्थी को अधिकतम सजा दी जानी थी और उसके बाद डेढ़ से गुना किया गया। धारा 31 के तहत निर्धारित कारावास की न्यूनतम अवधि 10 वर्ष है, इस हिसाब से, इसे डेढ़ गुना बढाने पर न्यूनतम सजा 15 साल हो जाती है। अंततः, इस न्यायालय द्वारा आदेशित सजा 16 साल के सश्रम कारावास की थी। न्यायालय ने यह भी ध्यान

में रखा कि उसमें अपीलार्थी 65 वर्ष का था और विभिन्न बीमारियों से जूझ रहा था। यह भी आदेश दिया गया कि सजा साथ-साथ चलेगी और जहां तक दोनों मामलों के संबंध में गुजरात में निचली अदालत द्वारा लगाया गया एक लाख रुपये का जुर्माना है, तो वही रहेगा। जहां तक बंबई मामले में 3 लाख रुपये के जुर्माने की बात है तो उसे 3 लाख रुपये से घटाकर 2 लाख रुपये कर दिया गया। तद्नुसार अपीलों का निपटान किया गया।

9. इस प्रकार इस न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णयों से कानून के जो सिद्धांत सामने आते हैं, वे निम्न प्रकार हैं:-

(i) यदि पहले से ही कारावास की सजा काट रहे किसी व्यक्ति को बाद में कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो कारावास की बाद की अवधि सामान्य रूप से उस कारावास की समाप्ति पर शुरू होगी, जिसके लिए उसे पहले सजा सुनाई गई थी;

(ii) आम तौर पर बाद की सजा, पहले कारावास की अवधि की समाप्ति पर शुरू होगी जब तक कि अदालत बाद की सजा को पिछली सजा के साथ-साथ चलाने का निर्देश न दे;

(iii) सामान्य नियम यह है कि जहां अलग-अलग मामले, अलग-अलग अपराध संख्याएं होते हैं और मामले अलग-अलग निर्णयों द्वारा तय किए जाते हैं, तो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत साथ-साथ सजा नहीं दी जा सकती;

(iv) दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 (1) के तहत अदालत के पास यह निर्देश जारी करने का अधिकार और विवेक है कि बाद की सभी सजाएं पिछली सजा के साथ-साथ चलेंगी, हालांकि विवेक का प्रयोग, अपराध या घटित अपराधों के स्वरुप और तथ्यों की स्थिति के आधार पर विवेकपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए। लेकिन अदालत

द्वारा विशिष्ट निर्देश या आदेश होना चाहिए कि बाद की सजा पिछली सजा के साथ-साथ चलेगी।

10. उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून और वर्तमान मामले के तथ्यों से जुड़े ऊपर वर्णित कानून के सिद्धांत को लागू करते हुए, अपीलार्थी-अभियुक्त के उस निवेदन को सिरे से ख़ारिज किया जाता है कि उसे मिलने वाली बाद की सजा पिछली सजा के साथ चले। वर्तमान मामले में अपीलकर्ता को दो अलग-अलग मामलों के संबंध में दोषी ठहराया गया है, अलग-अलग अपराध संख्याएं हैं और अलग-अलग निर्णयों द्वारा मामलों का फैसला किया गया है। इसलिए, अपीलकर्ता दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत साथ-साथ सजा के किसी भी लाभ का हकदार नहीं है। उपरोक्त टिपण्णी के अनुसार, बाद की सजा सुनाते समय अदालत द्वारा जारी

कोई विशिष्ट आदेश या निर्देश नहीं है कि बाद की सजा पिछली सजा के साथ-साथ चले।

11. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 (1) के तहत उपरोक्त टिपण्णी के अनुसार दूसरी स्थिति में भी, न्यायालय के पास यह निर्देश जारी करने की शक्ति और विवेक है कि बाद की सजा को पिछली सजा के साथ-साथ चलाया जाए। उस स्थिति में भी, विवेक का प्रयोग अपराध के स्वरुप या घटित अपराधों के आधार पर विवेक-सम्मत ढंग से किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में अपीलकर्ता-अभियुक्त को एनडीपीएस अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है। उसे 4 किलो हेरोइन की बरामदगी के एक मामले में दोषी ठहराया गया है और 12 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई है वहीं एक अन्य मामले में 750 ग्राम हेरोइन की बरामदगी हुई है और एनडीपीएस एक्ट की धारा 31(ii) को देखते हुए उसे 15 साल के सश्रम कारावास की सजा सुनाई गई है। एनडीपीएस

अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषी पाए जाने वाले आरोपी के प्रति कोई नरमी नहीं दिखाई जानी चाहिए। जो व्यक्ति नशीले पदार्थों का कारोबार कर रहे हैं, कई कमज़ोर, निर्दोष युवा पीड़ितों की मौत का कारण बनने या प्राण-घातक आघात पहुँचाने में उनकी भूमिका होती है। ऐसे अभियुक्त समाज पर हानिकारक और घातक प्रभाव डालते हैं। वे समाज के लिए खतरा हैं। इस देश में नशीले और मादक पदार्थों की गुप्त तस्करी की इस तरह की संगठित गतिविधियों और ऐसे पदार्थों की अवैध तस्करी का समग्र रूप से समाज पर घातक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, एनडीपीएस अधिनियम से जुड़े मामले में सजा या दंड देते समय, समग्र रूप से समाज के हित को ध्यान में रखना आवश्यक है। इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए भी, विवेक का प्रयोग उस आरोपी के पक्ष में नहीं होगा जो नशीले और मादक पदार्थों की अवैध तस्करी में लिप्त पाया जाता है।

उपरोक्त टिपण्णी के अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 427 के तहत पिछली सजा के साथ-साथ बाद की सजा को चलाने के लिए विवेक का प्रयोग करते हुए भी, विवेकपूर्ण तरीके से और अपराध/घटित अपराधों के आधार पर विवेक का प्रयोग किया जाना है। इसलिए, एनडीपीएस अधिनियम के तहत अपराधों को देखते हुए, जो बहुत गंभीर हैं और बड़े पैमाने पर समाज के खिलाफ हैं, ऐसे अभियुक्त के पक्ष में कोई विवेक का प्रयोग नहीं किया जाएगा जो एनडीपीएस अधिनियम के तहत अपराध में शामिल हैं।

12. उपरोक्त के मद्देनज़र और उक्त उल्लेखित कारणों से, अपीलकर्ता-अभियुक्त की ओर से एफआईआर संख्या 43/1999 से जुड़े मामले में बाद की सजा को एफआईआर संख्या 134/1999 से संबंधित पिछली सजा के साथ-साथ चलाने के लिए निर्देशित करने हेतु निवेदन एतद्द्वारा खारिज किये जाते हैं। उपरोक्त के मद्देनज़र और उक्त उल्लेखित कारणों से,

वर्तमान अपील निष्फल हो जाती है और वह खारिज किए जाने योग्य है और तदनुसार खारिज की जाती है।

..... न्यायमूर्ति
[एम.आर. शाह]

..... न्यायमूर्ति
[बी. वी. नागरथना]

नई दिल्ली
दिसम्बर 07, 2021

अस्वीकरणः *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सके एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी|*